माननीय न्यायमूर्ति जी. एस. सिंघवी, एच. एस. बेदी और इकबाल सिंह, जे. जे. के समक्ष

निदेशक, कृषि, पंजाब और अन्य-अपीलार्थी

बनाम

नरिंदर पाठक और अन्य,-उत्तरदाता

एल. पी. ए. नo. 1997 का 273

13 अक्टूबर, 1999

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 19 & *21–आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955-धारा 7-उर्वरक नियंत्रण आदेश,* 1985-सी1।

19–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 293-1985 आदेश *विक्रेता को अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए नमूने का स्वतंत्र विश्लेषण करने का अवसर प्रदान नहीं करता है-एक अभियुक्त व्यक्ति को धारा 293 CrPC के संदर्भ में बचाव स्थापित करने का अधिकार है और वह साक्ष्य प्रस्तुत करके अपनी बेगुनाही साबित कर सकते हैं-कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया न तो मनमाना है और न ही अनुचित-1985 के आदेश का खंड 19 किसी भी संवैधानिक दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है-1985 के आदेश के खंड 19 को निरस्त करने वाले विद्वत एकल न्यायाधीश का आदेशखारिज।*

अभिनिर्धारित किया कि, 1985 के आदेश के खंड 19 की संवैधानिक वैधता पर खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण, जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर आधारित है, सही है, और हमारे लिए अलग दृष्टिकोण लेने कई कोई आवश्यकता नहीं है। 1985 के आदेश में एक विशिष्ट प्रावधान का अभाव, जो विक्रेता को अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए नमूने का स्वतंत्र विश्लेषण करने का अधिकार देता है, कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का उल्लंघन नहीं करता है और जिस व्यक्ति पर मुकदमा चलाया जाता है, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 293 के प्रावधानों के अनुसार अपना उचित बचाव स्थापित कर सकता है।

(पैरा 6)

इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया कि 1985 के आदेश का खंड 19 किसी भी संवैधानिक दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है। अपील की अनुमति है। विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा पारित 16 सितंबर, 1996 के आदेश को रद्द कर दिया जाता है।

(पैरा 8 &9)

श्री रूपिंदर खोसला, उप महाधिवक्ता, पंजाब, अपीलार्थियों *की ओर से*

श्री दिनेश गोयल, प्रतिवादी *संख्या 1 के अधिवक्ता*

निर्णय

• *जी. एस. सिंघवी, जे*

(1)यह अपील, कानून के निम्नलिखित प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए, डिवीजन बेंच द्वारा पारित 8 अक्टूबर, 1997 के आदेश को ध्यान में रखते हुए, हमारे समक्ष रखी गई हैः–

> "क्या उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1985 का खंड 19 भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 और 21 का उल्लंघन करता है?"

(2)सुनवाई में, विद्वत उप महाधिवक्ता ने बताया कि 16 सितंबर, 1996 का आदेश विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किया गया (शीर्षक-तारसेम सिंह *बनाम भारत* संघ *और अन्य*[1], *जिसके* माध्यम से उन्होंने 1966 के सी. डब्ल्यू. पी. सं. 7566, नरिंदर पाठक बनाम *भारत संघ* और अन्य, प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा भरे गए, सहित, *कई रिट* याचिकाओं *को अनुमति दी* और उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1985 (इसके बाद '1985 आदेश' के रूप में वर्णित) के खंड 19 को भारत के *संविधान के* अनुच्छेद 19 और 21 के अधिकार क्षेत्र से बाहर घोषित करके रद्द कर दिया और आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (संक्षेप में, अधिनियम) की धारा 7 के तहत रिट याचिकाकर्ताओं के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामलों को भी रद्द कर दिया था, यह फैसला, निरर्देशक, कृषि, पंजाब ओर अन्य बनाम मैसर्स गुरमुख मल शिबबा मल[2], LPA No.1996 के 1039, मे डिवीजन *बेंच के निर्णय से उलट दिया गया* है, *इसलिए, 1985 के आदेश की खंड* 19 से संबंधित प्रश्न की वैधानिकता को विशुद्ध रूप से अकादमिक माना जाना चाहिए। उन्होंने फिर तर्क दिया कि खंड 19 को केवल इसलिए असंवैधानिक घोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह विक्रेता को अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए नमूने का स्वतंत्र विश्लेषण करने का अवसर प्रदान नहीं करता है या इस आधार पर कि यह अस्पष्ट या अनुचित है। प्रत्यर्थी संख्या 1 का प्रतिनिधित्व करने

[1] 1996(3) Recent Criminal Reports 633

[2] 1997 (4) RCR 780

वाले विद्वात वकील ने विवादित आदेश का समर्थन किया और तर्क दिया कि विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा दी गई घोषणा को बहाल किया जाना चाहिए और उनके मुवक्किल के खिलाफ लंबित कार्यवाही को रद्द कर दिया जाना चाहिए क्योंकि उन्हें बचाव का प्रभावी अवसर नहीं मिलेगा।

(3) हमने, 1985 के आदेश के खंड 19, के संदर्भ में दी गयी परिविष्टियों को गंभीर विचार किया है। 1985 के आदेश का खंड 19 इस प्रकार है:–

"उर्वरकों के निर्माण, बिक्री और वितरण पर प्रतिबंधः–

(1) कोई भी व्यक्ति स्वयं या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा -

(a) बिक्री के लिए उत्पादन, बिक्री, बिक्री के लिए प्रस्ताव, स्टॉक या बिक्री के लिए प्रदर्शनी या किसी भी उर्वरक को वितरण, नहीं करेगा, जो निर्धारित मानक का नहीं है;

बिक्री के लिए उत्पादन, बिक्री, बिक्री स्टॉक के लिए प्रस्ताव या बिक्री के लिए प्रदर्शन या उर्वरकों के किसी भी मिश्रण (या एन. पी. के. उर्वरकों का मिश्रण, सूक्ष्म-पोषक उर्वरकों का मिश्रण और उसके संयोजन) का वितरण जो निर्धारित मानक का नहीं है (केंद्र सरकार द्वारा समय-समय पर निर्दिष्ट की जाने वाली अनुमेय भिन्नता की ऐसी सीमाओं के अधीन) या उर्वरकों के विशेष मिश्रण जो (XXX) निर्माण प्रमाण पत्र, इस आदेश के तहत उसे इस तरह के विशेष मिश्रण के संबंध में प्रदान किया गया; में निर्दिष्ट विवरणों के अनुरूप नहीं हैं, नहीं करेगा।

(ग) बिक्री, बिक्री का प्रस्ताव, स्टॉक ओर प्रदर्शनी या वितरण -

(i) कोई भी उर्वरक, वह पात्र जिसे इस क्रम में निर्धारित तरीके से पैक और चिह्नित नहीं किया गया है;

(ii) कोई भी उर्वरक जो किसी अन्य उर्वरक के लिए एक सीमा या विकल्प है जिसके नाम पर इसे बेचा जाता है;

(iii) कोई भी उर्वरक जिसमें मिलावट हो;

व्याख्याः–एक उर्वरक को मिलावटी माना जाएगा, यदि इसमें कोई ऐसा पदार्थ होता है जिससे इसकी पोषक तत्वों की मात्रा समाप्त या कम होने की संभावना होती है या उर्वरक निर्धारित मानक के अनुरूप नहीं होता है।

(iv) लेबल या पात्र का कोई भी उर्वरक जिसमें उर्वरक का निर्माता होने का तात्पर्य रखने वाली किसी भी व्यक्तिगत फर्म या कंपनी का नाम है, जो व्यक्ति, फर्म या कंपनी काल्पनिक है या मौजूद नहीं है;

(v) कोई भी उर्वरक, जिसका लेबल या पात्र या उसके साथ कोई भी विवरण होता है जो उर्वरक के लिए गलत दावा करता है या जो किसी विशेष सामग्री में गलत या भ्रामक है;

(vi) उर्वरक के रूप में कोई भी पदार्थ जिसमें पदार्थ नहीं है।वास्तव में, एक उर्वरक;

(vii) पादप पोषक तत्व के वजन द्वारा न्यूनतम गारंटीकृत प्रतिशत का प्रदर्शन किए बिना कोई भी उर्वरक।"

(4) प्रतिवादी संख्या 1 और अन्य याचिकाकर्ताओं ने खंड 1 की संवैधानिक वैधता को इस आधार पर चुनौती दी कि यह अस्पष्ट और अनुचित है, क्योंकि यह विक्रेता को अपनी पसंद की प्रयोगशाला में नमूने का परीक्षण कराने का अवसर प्रदान नहीं करता है। विद्वत एकल न्यायाधीश ने कीटनाशक अधिनियम, 1968; खाद्य मिलावट निवारण अधिनियम और औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम में निहित, कुछ प्रावधानों का उल्लेख किया और कहा कि 1985 के आदेश का खंड 19 अस्पष्ट और अनुचित है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के साथ पठित अनुच्छेद 19 का उल्लंघन करता है। इस संबंध में विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियों को नीचे प्रस्तुत किया गया हैः–

"संक्षेप में, विवादित, उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1985 का विनियम 19 अनुचित कानून का एक हिस्सा है। इसमे सरकार को किसी ऐसे व्यक्ति पर मुकदमा चलाने की मनमानी शक्ति दी गयी है, जो न्यायालय में यह नहीं दिखा सकता है कि सार्वजनिक विश्लेषक की रिपोर्ट, जिसने उर्वरक के नमूने को 'घटिया' घोषित किया है, संभवतः एक त्रुटि में पड़ सकती है जिससे वह नमूने का परीक्षण करते समय निष्कर्ष निकाला गया है। इसने एक ऐसे व्यक्ति का मूल्यवान अधिकार भी छीन लिया है जो उर्वरक के व्यापार में काम करता है और निर्माता द्वारा उसे आपूर्ति किए गए सीलबंद और सिलवाए गए थैलों को बेचता है। यहां तक कि इस कानून ने ऐसे व्यापारी को दंडनीय बना दिया है जिसने 'उर्वरक' जैसी आवश्यक वस्तुओं को ठीक से संग्रहीत किया है। मेरी राय है कि विवादित उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1985 का विनियमन 19 भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के साथ पठित अनुच्छेद 19 का उल्लंघन करता है और अपने वर्तमान रूप में इसे संचालित

करने/खड़े होने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इस तरह नियंत्रण आदेश के विनियमन 19 को इसके द्वारा निरस्त कर दिया जाता है। इस प्रकार पहले प्रस्ताव का उत्तर सकारात्मक में दिया जाता है।"

(5) जबकि, गुरमुख मल शिबबा *मल के मामले (सुप्रा), में* एकल न्यायाधीश के आदेश को पलटते हुए, खंड पीठ ने, अधिनियम के प्रावधानों, 1985 के आदेश और न्यायिक उदाहरणों का व्यापक रूप से उल्लेख किया और फिर कहा कि खंड 19 को इस आधार पर असंवैधानिक घोषित नहीं किया जा सकता था कि यह अस्पष्ट या अनुचित है। मामले का सारांश देते हुए, खंड पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः–

"जांच के तहत, मौजूदा निर्णय मे, अधिकारियों द्वारा, नियंत्रण आदेश के प्रावधानों के अनुसार, उर्वरक का एक नमूना लिया गया था जो, विश्लेषण पर गैर-मानक श्रेणी का पाया गया था। दोष का निर्धारण करने के लिए कानून के अनुसार कार्यवाही शुरू की गई है। शिकायतकर्ता/अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किया जाना बाकी है। इसके बाद ही याचिकाकर्ता को बचाव का अधिकार दिया जाएगा । यह वास्तव में, अंतिम निर्णय मे न्याय करने के लिए, पूर्व-परिपक्व होगा, जो न्यायालय ले सकता है। एक अभियुक्त व्यक्ति को निश्चित रूप से दंड संहिता की धारा 293 CrPC, के संदर्भ में बचाव स्थापित करने का अधिकार है। प्रतिवाद की प्रकृति क्या होगी, यह फिर से सरासर अनुमान का विषय हो सकता है। किसी भी मामले में यह कल्पना की जा सकती है कि याचिकाकर्ता अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए ऐसे सभी सबूत पेश करेगा। हो सकता है कि वह आधिकारिक गवाह से जिरह करने के लिए, किसी अन्य विशेषज्ञ से पूछताछ करे, या यह स्थापित करने के लिए विवाद के बिंदु से प्रासंगिक कानून पर किसी प्रसिद्ध प्राधिकरण का संदर्भ दे, कि विश्लेषक द्वारा पहुँचा गया निष्कर्ष वास्तव में अस्वीकार्य है और अंतिम उपाय के रूप में अदालत के लिए एक मामला बना सकता है कि वह तीसरे नमूने को किसी अन्य प्रयोगशाला द्वारा अपने विश्लेषण के लिए भेजे। उसके पास उपलब्ध, इन सुरक्षा उपायों के साथ यह कहा जा सकता है कि प्रक्रिया निर्धारित न तो मनमाना है और न ही अनुचित और न ही अनुचित। अनुच्छेद 19 (1) और 21 की कसौटी पर मामले की जांच करने, और शीर्ष न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर हमारा विचार है, कि उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1985 सक्षम विधानमंडल द्वारा अधिनियमित किया गया है और यह भारत के संविधान के किसी भी स्पष्ट प्रावधान का उल्लंघन नहीं करता है। परिणामस्वरूप, हम इन अपीलों को

स्वीकार करते हैं, श्री आर. एल. आनंद, जे. के फैसले को दरकिनार करते हैं, जिससे रिट याचिका को खारिज करने का आदेश दिया जाता है।"

(6) हमारी राय में, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा, निर्धारित कानून पर आधारित, 1985 के आदेश के खंड 19 की संवैधानिक वैधता पर, डिवीजन बेंच द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है और हमारे लिए अलग दृष्टिकोण लेने की कोई उपयुक्तता नहीं है। हमारा यह भी विचार है कि 1985 के आदेश में एक विशिष्ट प्रावधान का अभाव, जिसमें विक्रेता को अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए नमूने का स्वतंत्र विश्लेषण करने का अधिकार दिया गया है, कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का उल्लंघन नहीं करता है और जिस व्यक्ति पर मुकदमा चलाया जाता है, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 293 के प्रावधानों के अनुसार अपना उचित बचाव स्थापित कर सकता है।

(7) विद्वत एकल न्यायाधीश ने 1985 के आदेश के खंड 19 के संभावित दुरुपयोग का संकेत दिया है और इसे उक्त खंड को निरस्त करने के लिए आधारों में से एक बना दिया है, बहुत सम्मान से, हम इस दृष्टिकोण को मंजूरी देने में असमर्थ हैं, क्योंकि यह उच्चतम न्यायालय द्वारा, Collector of Customs, *Madras vs. Nathella Sampathu Chetty and another*[3], *State of Rajasthan vs. Union of India*[4], *Tamil Nadu Education Department Ministerial and General Subordinate Services Association vs. State of Tamil Nadu and another*[5] *और R.K. Garg vs. Union of India* [6], *में निर्धारित* कानून *के विपरीत है। अंतिम उल्लिखित* मामले में, विशेष वाहक बांड (उन्मुक्ति और छूट) अधिनियम, 1981, के प्रावधानों की संवैधानिकता की जांच करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्तियों ने, निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः–

"आर्थिक गतिविधियों से संबंधित कानूनों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धर्म आदि, जैसे, नागरिक अधिकारों को छूने वाले कानूनों की तुलना में, अधिक अक्षांश के साथ देखा जाना चाहिए। जे. होम्स जैसे महान व्यक्ति ने कहा है कि विधायिका को विधि के रिक्त स्थानों मे कार्य करने की अनुमति दी जानी चाहिए, क्योंकि उसे उन जटिल समस्याओं से निपटना पड़ता है, जो किसी भी सिद्धांत या सीधे माप दंड या सूत्र के माध्यम से समाधान को स्वीकार नहीं करते हैं, और यह विशेष रूप से आर्थिक मामलों से संबंधित कानून के मामले में सच है, जहां, इन विधि से रिक्त स्थानों में जिन

[3] 1996 (3) S.C.R. 786
[4] 1978 (1) S.C.R. 1
[5] 1980 (1) S.C.R. 1206
[6] 1981 (4) S.C.C. 675

समस्याओं से निपटने की आवश्यकता है, उनकी प्रकृति को विधायिका को अनुमति दी जानी चाहिए ।न्यायालय को, अन्य क्षेत्रों की तुलना में जहां मौलिक मानवाधिकार शामिल हैं, आर्थिक विनियमन के क्षेत्र में, विधायी निर्णय को न्यायिक सम्मान देने के लिए अधिक झुकाव महसूस करना चाहिए। न्यायालय को हमेशा यह याद रखना चाहिए कि कानून व्यावहारिक समस्याओं के लिए निर्देशित है, कि आर्थिक तंत्र अत्यधिक संवेदनशील और जटिल है, कि कई समस्याएं एकवचन और आकस्मिक हैं, ओर कि कानून अमूर्त प्रस्ताव नहीं हैं, और अमूर्त समरूपता से संबंधित नहीं है कि सटीक ज्ञान और उपचार का अच्छा अनुकूलन हमेशा संभव नहीं होता है, और यह कि निर्णय काफी हद तक अल्प और अस्पष्ट अनुभव पर आधारित एक भविष्यवाणी है। विशेष रूप से आर्थिक मामलों में प्रत्येक कानून, अनिवार्य रूप से अनुभवजन्य है, और यह प्रयोग पर आधारित है, या जिसे कोई परीक्षण और त्रुटि विधि कह सकता है, और इसलिए यह सभी संभावित स्थितियों के लिए प्रदान नहीं कर सकता है या सभी संभावित दुरुपयोगों का अनुमान नहीं लगा सकता है। जटिल प्रयोगात्मक आर्थिक विधान में कठोरता और असमानताएँ हो सकती हैं, लेकिन केवल इसी कारण से इसे अमान्य नहीं माना जा सकता *है। अदालतें,* जैसा कि, संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने, कृषि बनाम सेंट्रल रीग रिफाइनिंग कंपनी (1950) 94 एल. एड. 381 के मामले में बताया है, ऐसा नहीं कर सकती हैं ऐसी क्रूरताओं और असमानताओं से राहत के लिए, न्यायाधिकरणों में परिवर्तित हो जाए। दुरुपयोग की संभावनाएं भी हो सकती हैं, लेकिन वह भी स्वयं कानून को अमान्य करने का आधार नहीं हो सकता है, क्योंकि किसी भी विधायिका के लिए यह अनुमान लगाना संभव नहीं है कि, विकृतियों और इसके कानून के दुरुपयोग से जो इसके प्रावधानों के अधीन लोगों द्वारा किया जा सकता है और इस तरह के विकृतियों और दुरुपयोग के खिलाफ प्रावधान किया जा सकता है। वास्तव में, इसके निर्माण पर कितना भी ध्यान दिया जाए, ऐसे कानून की कल्पना करना मुश्किल है जो विकृत मानव सरलता द्वारा दुरुपयोग किए जाने में सक्षम नहीं है। इसलिए न्यायालय को, उसके प्रावधानों की व्यापकता के आधार पर ऐसे विधान की संवैधानिकता का निर्णय लेना चाहिए, न कि उसकी कठोरताओं या असमानताओं या इसके किसी भी प्रावधान के दुरुपयोग की संभावनाओं के आधार पर। यदि कोई लापरवाही, असमानता या दुरुपयोग की संभावना प्रकाश में आती है तो विधायिका हमेशा कदम उठा सकती है और उपयुक्त संशोधनकारी कानून बना सकती है। यही

व्यावहारिक दृष्टिकोण का सार है जिसे जटिल आर्थिक मुद्दों से निपटने में विधायिका का मार्गदर्शन करना चाहिए।"

(8) ऊपर की गई चर्चा के आधार पर, हम यह मत रखते है कि 1985 आदेश का खंड 19, किसी भी संवैधानिक दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है, और, मैसर्स गुरमुख माल *शिबबा माल के मामले (सुप्रा) में* डिवीजन बेंच द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है।

(9) ऊपर लिखित कारणों के लिए, विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा पारित 16 सितंबर, 1996 के आदेश को खारिज कर दिया जाता है और प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए हैताकि वह अपनी भाषा में इसेसमझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

मंदीप सिंह

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी (Trainee Judicial Officer) Gurugram, हरियाणा